संस्कृत का रंगमंच और सिनेमा

-डॉ. सूर्य प्रकाश पाण्डेय

१२० वर्ष पहले जब फिल्म विधा ने जन्म लिया तो इसकी उपस्थिति जादुई साबित हुई। भाषा और संस्कृति की दीवारों को लांघकर लोगों तक पहुँचती एक विधा जो दूसरी सभी रचनात्मक अभिव्यक्तियों से लाभ उठाती थी- साहित्य, संगीत, चित्रकला, स्थापत्य आदि।

दादासाहेब फाल्के भारतीय सिनेमा के जनक माने जाते हैं, दादासाहेब फाल्के राष्ट्रीय दर्शन एवं स्वदेशी के प्रबल समर्थक थे। एक विचारधारा जो आत्मनिर्भर स्वदेशी भारत की परिकल्पना से जुड़ी हुई है। दादासाहेब फाल्के सुसंस्कृत, सुशिक्षित, तकनीकी एवं राजनीतिक दृष्टि से सचेतन और ज्ञानवान व्यक्ति थे। उनकी पृष्ठभूमि पूरी तरह पारंपरिक शास्त्रीय संस्कृति की थी। उनका जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ था जो संस्कृत भाषा साहित्य के विद्वानों का परिवार था। संस्कृत का अध्ययन करने के बाद वह कला और स्थापत्य की शिक्षा लेने देश की तत्कालीन सबसे अच्छी संस्थाओं में गए, विशेष रूप से बड़ोदा। दादासाहेब फाल्के के १९१३ में अपनी पहली कथामूलक फिल्म बनायीं राजा हरिश्चंद्र। भारतीय सिनेमा के इतिहास में राजा हरिश्चंद्र पहली फीचर फिल्म है। राजा हरिश्चंद्र के माध्यम से उदीयमान भारतीय सिनेमा को मौलिक सांस्कृतिक पटभूमि हासिल हुई। राष्ट्रीय सांस्कृतिक नवोन्मेष की अभिव्यक्ति के रूप में राजा हरिश्चंद्र और उसकी अनुगामी फ़िल्में उन्नीसवीं सदी के अंत और बीसवीं सदी के उदयकाल में नई चिंताधारा और उपनिवेशवाद विरोधी आंदोलन का हिस्सा बन गईं।

१९२० तक बने मूक सिनेमा की विशिष्ट उपलब्धि थी सिनेमा का भारतीयकरण, जिसने बीस के दशक में हॉलीवुड की सवाक फिल्मों के आने से पहले ही अपनी अस्मिता स्थापित कर ली थी। उस काल के सन्दर्भ में ये तथ्य अविश्वसनीय सा लगता है कि फाल्के की दिलचस्पी समाज के उस वर्ग में कतई नहीं थी जो पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित होकर उन्हीं की जीवनशैली और सामाजिक तौर तरीकों का गुलाम था अतः अंग्रेजी भाषा के प्रेस ने फाल्के के द्वारा बनायीं गयी फिल्मों की उपेक्षा की। फाल्के के अतिरिक्त महाराष्ट्र के ऐसे तीन अन्य फिल्मकार और हैं जिन्होंने मूक सिनेमा के दौर में आगे आने वाली पीढ़ी की सिनेमाई कला को प्रभावित किया:-

हरिश्चंद्र सखाराम भटवाडेकर-भारत की प्रथम फिल्म के प्रदर्शन में हरिश्चंद्र सखाराम भटवाडेकर शामिल थे। इनकी प्रसिद्धि सावे दादा नाम से है। भारत में वृत्तचित्र शुरू करने का श्रेय इनको ही जाता है। जगमोहन लिखते हैं- "भारत में तथ्यपरक फिल्मों का जनक होने का श्रेय हरिश्चंद्र सखाराम भटवाडेकर को ही जाता है। क्योंकि यही तथ्यपरक फ़िल्में ही वृत्तचित्रों की जनक थीं। ये फ़िल्में कल्पना नहीं तथ्यों पर आधारित थीं। "सावे दादा ने अपने वृत्तचित्रों के माध्यम से भारत के लोगों के भीतर राष्ट्रीय चेतना का निर्माण करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

रामचंद्र गोपालदादासाहेब तोरने- महाराष्ट्र की विभिन्न लोक कलाओं से प्रेरणा प्राप्त करने वाले दादासाहेब तोरने ने 21 साल की उमर में ही फीचर फिल्म बनाने का फैसला कर लिया था। तोरने का हिन्दू संत पर रचित मराठी नाटक पर बनी फिल्म "श्री पुंडलीक" काफी चर्चित रही। भारत में फिल्म के भीतर संपादन क्रिया के पहले प्रयोग का श्रेय भी इन्हीं को जाता है।

बाबूराव कृष्ण राव मिस्त्री (बाबुराव पेंटर) राष्ट्रीय फिल्म अभिलेखागार में बाबुराव पेंटर की संरक्षित फ़िल्में इस बात का सबूत है कि एक मूर्तिकार के रूप में उन्होंने एक मूर्तिकार के रूप में अपने गुणों अनुभवों के निचोड़ से भारतीय सिनेमा में कला और तकनीक स्वदेशी आधार तैयार किया। इसी कारण से इन्हें "भारतीय फिल्म कला के पिता" के रूप में जाना जाता है।

बोलती फिल्मों के दौर में सिनेमा के ऊपर व्यावसायिक दबाव बढ़ा और पटकथा में अश्लीलता और हिंसा ने जगह बनानी शुरू कर दी। देखते ही देखते फाल्के द्वारा शुरू की गयी सिनेमाई शैली मद्धम पड़ गयी। १९५१ में बनी पाटिल फिल्म निरक्षण समिति के द्वारा ये माना गया कि १९४८ के बाद सिनेमा का स्वामित्व ऐसे लोगो के हाथों में चला गया था जिनका नेतृत्व रीढ़हीन था।

१९६० में सरकार द्वारा फिल्म वित्त निगम की स्थापना की गयी जो बाद में राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम में तब्दील हो गया। इसी के सहयोग से १९८३ में 'जी वी अय्यर' के निर्देशन में भारत की पहली संस्कृत भाषा में बनी फिल्म 'आदि शंकराचार्य' का निर्माण किया गया। तकनीक और कथानक की दृष्टि से ये एक सुगठित फिल्म थी। इसकी पटकथा को संस्कृत के आचार्यों और विद्वानों के सहयोग से लिखा गया था। संपादन, छायांकन, ध्वनि संरचना और पटकथा की दृष्टि से, सनातन धर्म की विविध विचारधाराओं का एकीकरण करने वाले, महान दार्शनिक और धर्म प्रवर्तक आदि शंकराचार्य के जीवन पर बनी इस फिल्म को भारत की सर्वश्रेष्ठ फिल्मों में से एक कहा जा सकता है। इस फिल्म को उस साल की सर्वश्रेष्ठ फिल्म, सर्वश्रेष्ठ पटकथा, सर्वश्रेष्ठ छायांकन एवं सर्वश्रेष्ठ ध्वनि संरचना के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया। कलात्मक होने के नाते इसे दर्शक नहीं मिले परन्तु भारत में सिनेमा अध्येताओं के द्वारा दिए गए विमर्शों में इस फिल्म को क्यूँ नहीं शामिल किया गया ये एक पड़ताल का प्रश्न है।

भूमंडलीकरण के दौर में जब लोकप्रिय सिनेमा के द्वारा एक उपभोक्तावादी वर्ग को तैयार किया जा रहा था ऐसे दौर में (१९९३) जी वी अय्यर द्वारा निर्देशित दूसरी संस्कृत फिल्म 'भागवद गीता निर्मित हुई, इस फिल्म को भी राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

ये वो दौर था जब फिल्मों में सुगठित कथा के तत्व गायब होते जा रहे थे और फिल्म वितरक नामक घटक सिनेमा व्यवसाय में बहुत शक्तिशाली हो गया था। ऋण के भारी भोज को कम करने के लिए कुछ पैसे उधार लेकर फिल्म के कुछ मुख्य अंशों का ही फिल्मांकन किया जाता था और इन प्रसंगों को दिखाकर ही फिल्म बेचने का प्रयत्न किया जाता था ताकि वितरक से धन लेकर ऋणदाताओं को दिया जा सके। निर्माता द्वारा फिल्म में उन तत्वों को भर दिया जाता था जिन्हें वितरक पसंद करते थे ताकि फिल्म जल्दी से जल्दी बिक सके और अच्छे दाम मिल सकें। इन्ही वितरकों के द्वारा फिल्म स्टार

पद्धति को पूरी तरह से स्थापित कर दिया गया। इसी स्टार पद्धति से प्रभावित होकर फिल्म उद्योग में एक ऐसी खेप तैयार हो गयी जिनका भाषाई ज्ञान बहुत सीमित था एवं संस्कृति, समाज और साहित्य के प्रति समझ बेहद सतही। सिनेमा पर वितरकों के इस दुष्प्रभाव को समझने के लिए पाटिल कमीशन की रिपोर्ट को पढ़ा जाना उपयोगी सिद्ध होगा। रिपोर्ट में समस्या के प्रत्येक पहलू का विश्लेषण किया गया है। क्योंकि भाषा अपने भीतर संस्कृति के तत्वों को समाहित किये हुए है अतः ऐसे दौर में संस्कृत भाषा में बनी फ़िल्में नगण्य रहीं।

डिजिटल के दौर में सिनेमा का स्वामित्व वितरकों से छूटा तब संस्कृत भाषा की सिनेमा में नयी लहर आई। सिनेमा के कलात्मक पक्ष को मजबूती से समझने वाले निर्देशकों के द्वारा ऐसी फिल्मों का निर्माण किया गया जिसे अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सवों में स्थान प्राप्त हुआ। इसमें प्रमुखता से सामने आती है केरल के 'विनोद मंकरा' द्वारा निर्देशित 'प्रियमान्सम' जिसे वर्ष २०१५ में राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 17 वीं सदी के केरल में स्थापित 'प्रियमान्सम' को केरल की वामपंथी सरकार का विरोध भी झेलना पड़ा। इस फिल्म को कलात्मक दृष्टि से ज़रूरी फिल्म होने के बाद भी केरल के फिल्मोत्सव में स्थान नहीं दिया गया। इसे साफ़ तौर पर अभिव्यक्ति की आजादी का हनन ही कहा जा सकता है। कालिदास की रचनाओं से प्रभावित विनोद मंकरा की यह फिल्म भारतीय सिनेमा के दो महत्वपूर्ण पहलुओं को संबोधित करती है वह है नृत्य गीतों की प्रधानता एवं भावातिरेक की अधिकता। दरअसल इस फिल्म में नृत्य गीत का प्रयोग कृत्रिम आरोपण न होकर उसकी प्रदर्शनीयता को बढ़ाता है। नाट्यशास्त्र में भरत ध्रुव गीतों का उल्लेख करते हैं दरअसल इसके गायन से उपयुक्त भाव को प्रकट करना सहज हो जाता है- जैसे चिंता, विषाद,आवेग, संभ्रम तथा श्रृंगार। ध्रुव गीतों का उद्देश्य था दर्शकों को उनके अहंकार से मुक्ति दिलाकर चेतना के उत्कृष्टतम स्तर तक ले जाना।

२०१५ के बाद संस्कृत भाषा में कई ज़रूरी फ़िल्में बनी और प्रदर्शित भी की गईं, २०१६ में 'जी प्रभा' द्वारा निर्देशित 'इष्टिः', इसे भारत के अन्तर्राष्ट्रर्षीय फिल्म महोत्सव में स्थान प्राप्त हुआ। २०१७ में ही बनी 'एम् सुरेन्द्रम' की 'सूर्यकान्तः' एवं संस्कृत की पहली थ्री डी फिल्म 'पी के अशोकन' द्वारा निर्देशित ' अनुरक्तिः'। हाल ही में संस्कृत की पहली अनिमेशन फिल्म 'पुण्यकोटि' का प्रसारण 'नेटफ्लिक्स' पर भी किया गया। डिजिटल क्रान्ति के इस दौर में संस्कृत भाषा में बना दृश्य श्रव्य कंटेंट कई ऑनलाइन चैनल पर देखा जा सकता है। यू-ट्यूब पर बड़ी मात्रा में बच्चों के लिए दृश्य श्रव्य कंटेंट उपलब्ध है। निश्चित ही ये एक अच्छी स्थिति है। तकनीक के इस दौर में सिनेमा बनाना आसान हो गया है पर ज़रूरी है नए फिल्मकारों में फिल्म के प्रति एक सौन्दर्यबोध का निर्माण हो। सिनेमा मात्र उद्योग नहीं बल्कि एक ऐसी कला है जो अपने भीतर कई कलाओं को समाहित किये हुए है और ये सभी कलाएं बौद्धिक रचनात्मक चेतना के लिए अनिवार्य हैं। संस्कृत साहित्य तो सौन्दर्यबोध के विकास के लिए अनिवार्य सामग्री उपलब्ध कराता है। संस्कृत भाषा की जरूरी फ़िल्में बनाने वाले जी वी अय्यर एवं विनोद मंकरा के अनुसार संस्कृत भाषा का गद्य भी काव्य सी अनुभूति देता है। कला की भारतीय अवधारणा के अनुसार कोई भी कृति तभी कलात्मक हो सकती है जब वह दो अनिवार्य शर्तें पूरी करती हो, पहली, इसे विशेष कौशल द्वारा

तैयार किया गया हो और दूसरी उसे छंदबद्ध होना चाहिए, यानी उसमे लय, संतुलन, अनुपात और सामंजस्य होना चाहिए। संस्कृत भाषा में सिनेमा बना चुके निर्देशकों की बातों से ये ज़ाहिर है कि संस्कृत में लिखी गयी पटकथा के संवाद, भारतीय अवधारणा में कला की दूसरी अनिवार्य शर्त को पूरा करते हैं और जहाँ तक बात है सिनेमाई भाषा की तो अब तक का बना संस्कृत सिनेमा तकनीक की दृष्टि से भी सुगठित दिखाई देता है।

संस्कृत भाषा के सिनेमा को यदि अपनी पैठ दर्शकों के बीच में बनानी है तो ये एक अच्छा समय है। ओ टी टी प्लेटफार्म के आने से वितरण की समस्या समाप्त हुई है। किसी भी भाषा में बनी कलात्मक दृश्य श्रव्य कृति अपने दर्शकों तक ज़रूर पहुँचती है। वर्तमान में संस्कृत भाषा के सिनेमा को दर्शकों के बीच और सहजता से पहुंचाया जाना चाहिए। जरूरी नहीं कि संस्कृत में बनी हर फिल्म को उस रूपक की पहली संस्कृत फिल्म ही कहा जाए या फिर उसका परिवेश शास्त्रीय ही रखा जाए। हमें संस्कृत में ऐसी पटकथाएँ तैयार करनी होंगी जिन्हें शहरी परिवेश में फिल्मांकित किया जा सके। फिल्म स्कूल में पढ़ रहे छात्रों का अनिवार्य रूप से संस्कृत साहित्य से परिचय कराया जाना चाहिए। संस्कृत में बनी ज़रूरी कलात्मक फिल्मों को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए। वर्तमान शिक्षा नीति ने भाषा पर बल दिया है, भविष्य में संस्कृत भाषा का सहज प्रयोग बढेगा अतः संस्कृत में बना दृश्य श्रव्य सम्बन्धी कंटेंट की मात्रा भी बढ़ेगी। संस्कृति के प्रति वर्तमान में उत्तर प्रदेश सरकार की प्रतिबद्धता जग जाहिर है, हर स्तर पर संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसार पर भी जोर दिया जा रहा है। नोएडा में निर्माणधीन फिल्म सिटी से सभी को आशाएं हैं, ये संस्कृत भाषा में बन रहे सिनेमा को नए आयाम देगा और इस भाषा को सहजता से प्रयोग में लाने वालों के लिए नए रोज़गार के अवसर भी प्रदान करेगा। वर्तमान में देश के नीति निर्माता इस बात को समझते हैं कि भाषा और संस्कृति दोनों एक दूसरे की पूरक हैं। भाषा की भी अपनी संस्कृति होती है और संस्कृति भाषा के बिना गूंगी होती है। तकनीक के इस दौर में संस्कृत भाषा को अभिव्यक्ति के नए अवसर प्रदान हुए हैं। भविष्य में संस्कृत भाषा में बनने वाले सिनेमा से ये उम्मीद की जा सकती है कि वह दर्शकों को सिनेमाई कला की भरपूर सौन्दर्यानुभूति प्रदान करेगा।

संदर्भ सूची :

1. हिन्दी सिनेमा का सच, मृत्युंजय (संपादक), वाणी प्रकाशन, 1997

2. बॉलीवुड पाठ, विमर्श के संदर्भ, ललित जोशी, वाणी प्रकाशन, 2005

3. अभिनव सिनेमा, प्रचंड प्रवीर, वाणी प्रकाशन 2017 Essays in Indian Nationalism, Anand K Coomarswamy, Munshiram ManoharLal Publishers

-डॉ. सूर्य प्रकाश पाण्डेय

सहायक आचार्य दर्शन एवं संस्कृति विभाग,

- डॉ. यशार्थ मंजुल

सहायक आचार्य फिल्म अध्ययन

म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा